विवाह का उद्देश्य – आत्म-मिलन

ब्रह्माकुमार दिनेश, हाथरस

नए कानून के अनुसार विवाह का रजिस्ट्रेशन आवश्यक कर दिया गया है और मुस्लिम संस्था, मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड भी इसे लागू करने के लिए सहमत हो चुका है। इससे लाभ यह होगा कि कानूनन व्यक्ति बँध जायेगा और अन्य विवाह करने के लिए उसे सोचना पड़ेगा।

आत्म-ज्ञान बिना आत्म-मिलन कैसा?

प्रश्न उठता है कि आज के समय में रचाए गए विवाहों का उद्देश्य क्या है? क्या सचमुच यह दो आत्माओं का मिलन है? परंतु आत्मा के ज्ञान को तो ये बेचारे जानते ही नहीं? 'विवाह, विकार (sex) के लिए एक सर्टिफिकेट है जो कि समाज के द्वारा पुरुषों को दे दिया जाता है फिर चाहे जैसे स्त्रियों पर इससे संबंधित कितनी भी ज्यादतियाँ हों'– यह मानना है महिला अपराध नियंत्रण से जुड़ी हुई एक सामाजिक संस्था की अध्यक्षा का। उनका तो यहाँ तक भी कहना है कि 'पत्नी के साथ किसी भी प्रकार की विकारी जबरदस्ती एक प्रकार का बलात्कार ही है।' सरकार द्वारा महिलाओं के उत्पीड़न को रोकने के लिए महिला आयोग और घरेलू हिंसा कानून बन चुका है, कानून को लागू हुए एक वर्ष बीत चुका है परंतु एक दैनिक समाचार-पत्र में छपी रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष भर में 7119 शिकायतें ही दर्ज की गईं।

नियम-संयम कहाँ गए?

सतयुगी परंपराओं में वैवाहिक पद्धति स्वयंवर या दैवीय पद्धति ही होती थी। योग-बल की सृष्टि संरचना थी। वैदिक काल में सोलह श्रृंगार की तरह ही, सोलह प्रकार के संस्कार मनुष्य के जीवन में बनाये गये थे। आज विकसित होती पद्धति 'बिन फेरे हम तेरे' को लोग स्वीकार करने लगे हैं, ऐसे में विवाह का उद्देश्य केवल वंशवृद्धि और मौज-मस्ती भरी कामनाओं की पूर्ति मात्र रह गया है। समझदार लोग प्रश्न उठाते हैं कि विवाहपूर्व और विवाहोपरान्त नियम-संयम की बात कहाँ और कितनी शेष रही है?

कहाँ है पवित्र गृहस्थ धर्म

आज भी पवित्र अग्नि के सम्मुख सात फेरे लगवाकर, जनेऊ पहनाकर प्रतिज्ञा करायी जाती है और पति को परमेश्वर की संज्ञा दी जाती है परंतु प्रथम दिवस से ही कन्या को अपवित्रता रूपी साँप डसना शुरू कर देता है। वास्तव में, विवाह दो आत्माओं के सहयोग का पवित्र संबंध अर्थात् दो आत्माओं का पावन मिलन और दो कुलों का आपस में समन्वय होता है। विवाह के समय लड़के को पहनाया जाने वाला जनेऊ ब्राह्मणत्व की निशानी है, यह पवित्रता का महामंत्र भी है जो कि पवित्र गृहस्थ धर्म का भी प्रतीक है। आज भी जनेऊ को लघुशंका या दीर्घशंका के समय बुजुर्ग कान में गाँठ बाँधकर डाल लेते हैं। इससे भी सिद्ध होता है कि किसी भी प्रकार की शंका या अपवित्रता और दूषिता से बचने के लिए कान में गाँठ लगा लेनी चाहिए अर्थात् कान पकड़ लेने चाहिएं। परंतु आज तो पवित्र गृहस्थ धर्म के स्थान पर केवल गृहस्थ रह गया है और संस्कार के अर्थ में टिकने की बातें कर्मकाण्ड तक सीमित रह गई हैं और कहीं तो कर्मकाण्ड तक भी नहीं रही हैं।

दहेज का दाग

पूर्वकाल में श्रद्धानुसार दान, कन्यादान के साथ सौगातों के रूप में बिना माँगे दिया जाता था परंतु आज स्थिति विकट है। दूल्हे बिक रहे हैं। बोलियाँ लग रही हैं। उच्च पद वाला

या धनाढ्य है तो उसकी उतनी ही बोली ऊँची जा रही है। माँगने वाला भी, भिखारी की तरह माँगने में शर्म महसूस नहीं कर रहा। जो पिता कन्या के विवाह को बिना दहेज के करना चाहता है, अपने पुत्र के लिए बड़ी-बड़ी माँगे कर रहा है। फिर बताइये कहाँ रहा विवाह एक निर्मल बंधन?

विवाह प्रतिबंध या विकार प्रतिबंध

ईश्वरीय विश्व विद्यालय के बारे में भी लोगों को यह बड़ी भ्रांति है कि यहाँ विवाह पर प्रतिबंध रहता है और रूढ़िवादी जन यह भी कह ही देते हैं कि यहाँ भाई-बहन बना दिया जाता है। यदि सभी ऐसा करेंगे तो सृष्टि कैसे चलेगी, यह रद्दी के टोकरे में डालने लायक तर्क भी लोगों द्वारा दिया जाता है। हम ऐसे महानुभावों को बताना चाहेंगे कि एक पौराणिक प्रसंग के अनुसार शंकर जी ने कामदेव को भस्म कर दिया था जब उसने काम विकार का बाण शंकर जी के माथे पर स्थित आज्ञा-चक्र (भ्रकुटि) पर मारा था। देवताओं में हाहाकार मच गया कि बिना कामदेव के मनुष्य सृष्टि कैसे चलेगी? तब शंकर जी ने कहा कि घबराने की बात नहीं, अमुक युग में कामदेव, श्रीकृष्ण के प्रथम पुत्र प्रद्युम्न के रूप में जन्म लेगा। तो प्रश्न उठता है कि प्रद्युम्न के रूप में कामदेव के पैदा होने से पहले सृष्टि कैसे चली? श्री कृष्ण और उनके पूर्वज और स्वयं प्रद्युम्न कैसे पैदा हुए? ईश्वरीय विश्व विद्यालय में विवाह पर नहीं परंतु काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों के वशीभूत होने पर प्रतिबंध है। यह प्रतिबंध तो श्रीमद्भगवद् गीता में भी है और फिर कई लोग तो बिना विवाह के या विवाह की सीमा तोड़कर भी अवैध रूप से विकारों रूपी ज़हर को पीते हैं, केवल विवाह पर रोक लगाने से उनका इलाज कैसे हो पाएगा। अत: रोक विवाह पर नहीं है। काम-क्रोध-लोभ .....जैसी नारकीय वृत्तियों पर रोक है।

सुयोग्य वर, न कि धनवान वर

विवाह के लिए ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संस्थापक पिताश्री ब्रह्मा बाबा की कभी मनाही नहीं रही। बाबा कहते हैं, बच्चे, कन्या विवाह करना चाहती है तो आप अपनी यह ज़िम्मेदारी अवश्य पूरी करो। अगर वह अपना जीवन निर्विकारी बनाना चाहती है तो ज़बरदस्ती विकारों की दलदल में नहीं डालो। कन्या की शादी में दहेज आदि के लिए बाबा कहते, बच्चे, देखो आज लोग कर्ज लेकर भी कन्या की शादी में लगाते हैं परंतु होना यह चाहिए कि सुयोग्य वर खोजें, न कि धनवान वर। बाबा ने भक्ति मार्ग के पार्ट में अपनी लाड़ली कन्या का विवाह धनवान लड़के से न करके एक अत्यंत विद्वान साधारण आमदनी वाले अध्यापक से किया था जिसकी उस समय समाज और परिवार ने आलोचना भी की थी। यदि परमपिता परमात्मा ही परम वर के रूप में मिल रहा हो तो इससे बड़ी उपलब्धि कोई होती है क्या?

कन्या बनी पूज्य से पुजारी

एक पिता को कन्या की शादी रचाने में कितने धक्के खाने पड़ते हैं। किस-किस को सिर झुकाना पड़ता है! अगर एक से अधिक कन्यायें हों तो एक तरह से पिता बर्बाद ही हो जाता है शादी रचाते-रचाते। यह है आज के समाज का आंतरिक सत्य। पहले कन्या पूज्य होती है, सब उसके चरणों में पड़ते हैं, विवाह के बाद उसे सबके चरणों में पड़ना होता है। विवाह के बाद इच्छा न होने पर भी उस कन्या को विकारों की दलदल में ज़बरदस्ती गिरना ही होता है। पत्नी के रूप में वह यही समझती है कि पति ही उसका भरतार अर्थात् भरण-पोषण करने वाला है। अपने पेट के लिए वह हर प्रकार की विकारी भावनाओं की पूर्ति करने के लिए तैयार रहती है। तब तो यह माना ही जा सकता है कि घर-घर आज शिवालय, पवित्रालय या स्वर्ग न होकर वेश्यालय ही बन चुके हैं। आज काम विकार का प्रयोग संतान

के लिए नहीं बल्कि आनन्द या भोग के लिए होता है, संतान तो इस कृत्य की अंतिम परिणति हो ही जाती है और इस प्रकार से उत्पन्न संतान आज क्या गुल खिला रही है! और इसके बाद की पीढ़ी क्या गुल खिलायेगी! यह तो बताने की आवश्यकता शायद हमें न पड़े। सतयुगी पवित्र परंपरायें सर्वश्रेष्ठ थीं। वैदिक काल में भी, मंत्रों का उच्चारण करते हुए, संयमपूर्ण जीवन बिताते हुए जीवन में एक या दो बार ही सुयोग्य संतान के लिए गर्भधारण की प्रक्रिया संपन्न होती थी। परंतु आज तो विवाह और संतानोत्पत्ति की आड़ में राक्षसी कृत्यों की बाढ़-सी आ गई है।

क्या आप लक्ष्मी या नारायण को वरने लायक हैं?

भक्त शिरोमणि नारद जी का प्रसंग रामचरित मानस में आता है कि वे एक बार विवाह करना चाहते थे परंतु उन्हें अपमानित होना पड़ा। उन्हें अपनी सूरत देखने के लिए कहा गया था जो कि उस समय बंदर की तरह हो गई थी। नारद जी ने जब भगवान से पूछा कि आपने मेरी विवाह की इच्छा को पूर्ण क्यों नहीं होने दिया, तब उन्हें बताया गया कि 'जो समस्त इच्छाओं, आशाओं को छोड़कर मुझे याद करते हैं, मैं उनकी वैसे ही रखवाली करता हूँ जैसे बालक की रखवाली एक माँ करती है। छोटा बच्चा जब आग या साँप को पकड़ने की कोशिश करता है तो माँ ही उसकी रक्षा करती है क्योंकि वह जानती है कि इससे उसे नुकसान ही होगा। बड़ा होने पर माता स्नेह तो करती है परंतु उसे बचाने की अधिक चिंता नहीं करती है। ज्ञानीजन प्रौढ़ (बड़े) हैं, उनमें मेरी याद या योग से प्राप्त हुआ बल होता है परंतु तुम भक्त थे और केवल बालक की तरह थे। इसलिए तुम्हें काम रूपी माया से बचाने के लिए ऐसा किया था। काम, क्रोध आदि विकार समस्त दु:खों की खान हैं इसलिए मैंने तुम्हें बचाया था।'

परमपिता परमात्मा शिव भी एक माँ की तरह हम आत्माओं की संभाल करते हैं। वे कहते हैं, बच्चे, तुम्हें नर से नारायण और नारी से लक्ष्मी बनना है। मैं तुम्हें ऐसा बनाने आया हूँ। अब इन्हें वरने के लिए अपनी शक्ल तो देखनी ही होगी कि कहीं वह बंदर की तरह काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार की विकरालता लिये तो नहीं है?

एक बार स्वामी विवेकानन्द से किसी ने पूछा कि आपने विवाह क्यों नहीं किया तो उन्होंने कहा कि मैं एक संन्यासी हूँ और एक संन्यासी तो इस बारे में सोच भी नहीं सकता है। यही स्थिति स्वामी दयानन्द सरस्वती और अनेक जाने-माने संतों की रही है जिन्होंने समाज के पुनरुत्थान के लिए जन-जागरण का कार्य किया था। आज केवल थोड़े से जन-जागरण की बात नहीं है बल्कि परमपिता परमात्मा शिव द्वारा सतयुगी सृष्टि के सृजन का परम कर्त्तव्य चल रहा है। ऐसे महान् कार्य में लगे हुए ब्रह्मामुख कमल से उत्पन्न ब्राह्मणों के पास काम, क्रोध के लिए समय कहाँ? जबकि पूरी दुनिया मौत के मुँह में और बारूद के ढेर पर बैठी है, फिर भी यदि हम इंद्रियों की चपलता को ढोए जा रहे हैं तो यह हमारी किस्मत!

लोग कहते हैं कि शादी वह लड्डू है जिसने खाया वह पछताया और जिसने न खाया वह भी पछताया। परंतु हम कहना चाहेंगे कि जिसने भगवान की अनमोल प्राप्तियों को भुलाया वह इस नर्क में आँसू बहाकर पछताया। जिसने प्रभु संग में रहकर भाग्य बनाया वह सदा मुस्कराया। ❖

अगर किसी मनुष्य के पास रहने के लिए मकान न हो तो वह गली-गली में घूमता है। इसी प्रकार मन भी भटकता है कि कहीं शांति का ठिकाना मिल जाये लेकिन मन की चंचलता से निराश होने की आवश्यकता नहीं है बल्कि शांति के सागर परमात्मा को तथा परमधाम को जानकर मन को वहाँ ठिकाना दीजिए तो वह शांत हो जायेगा।